बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 197

बेमानी कवायद

अब शायद वक्त आ गया है कि राजकोषीय जवाबदेही से संबंधित कानून को विदा कर दिया जाए क्योंकि इससे फायदा कम, नुकसान ज्यादा हो रहा है। शायद एकबार वर्ष 2007-08 को छोड़ दिया जाए तो इस कानून के तहत तय राजकोषीय घाटे का लक्ष्य कभी हासिल नहीं हो सका है। राजकोषीय घाटे को सकल घरेलू उत्पाद के 3 फीसदी के बराबर रखने का लक्ष्य लगातार टाला जाता रहा या उसे स्थगित किया गया। समस्या में इसलिए भी इजाफा हुआ क्योंकि जब वित्त मंत्री इस लक्ष्य के आसपास जाने में भी नाकाम रहे तो उन्होंने हिसाब में छेड़छाड़ की और पूरा राजकोषीय बोझ सरकारी क्षेत्र की लाचार कंपनियों पर डाल दिया। सरकारी आंकड़ों में आ रही कमी को पूरा करने के लिए इन कंपनियों से एक से अधिक तरीके से धन वसूली की गई। एक समय अत्यंत अमीर रही तेल विपणन कंपनियों के पास अब बहुत कम नकदी बची होने की यह भी एक वजह है।

राजकोषीय जवाबदेही कानून के तहत लक्ष्य की प्राप्ति दर्शाने के अन्य तरीकों में बिल भुगतान न करना भी शामिल है। ध्यान रहे कि वित्त मंत्री ने हाल ही में कहा कि छोटे और मझोले उपक्रमों का बकाया भुगतान तत्काल किया जाना चाहिए। उन्होंने अन्य उपक्रमों का जिक्र नहीं किया जबकि उनकी राशि भी बकाया है। इसके अलावा राजस्व के आंकड़े हासिल करने के दबाव में काम कर रहे कर अधिकारी भी साल के आखिरी महीने में कंपनियों पर दबाव बनाते हैं कि वे अतिरिक्त कर चुकाएं। उनसे वादा किया जाता है कि अगले वर्ष की शुरुआत में ही उनकी राशि रिफंड कर दी जाएगी। ये तमाम तरीके अपनाने के बावजूद घाटे के आंकड़े लक्ष्य से कमजोर बने रहते हैं। अगर किसी को वास्तविक तस्वीर पर संदेह हो तो उसे जानना चाहिए कि नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने वित्त आयोग से क्या कहा था। उसने कहा था कि वर्ष 2017-18 में केंद्र का घाटा 3.46 फीसदी नहीं था जैसा कि संसद को बताया गया बल्कि यह इससे कहीं अधिक 5.85 फीसदी था।

वित्त मंत्रियों को ऐसे तोड़-मरोड़ के लिए दबाव में क्यों डाला जाता है कि वे करीब 6 फीसदी के घाटे को 3.5 फीसदी के आसपास दर्शाने को मजबूर हो जाते हैं? उन्हें खुलकर सच्चाई क्यों नहीं बताने दी जाती ताकि देश के सामने वास्तविक तस्वीर आ सके? राजकोषीय घाटे को घटाकर बचाने से सरकार में शामिल प्रमुख लोगों को यह प्रोत्साहन मिलता है कि वे और अधिक खर्च कर सकें जबकि हकीकत में इसकी गुंजाइश नहीं होती। अगर सही आंकड़े पेश किए जाएंगे और चेतावनी साफ नजर आ रही होगी तो राजकोषीय जवाबदेही को लेकर समझदारी बढ़ेगी। कुछ और नहीं तो निजी क्षेत्र के अर्थशास्त्री, रेटिंग एजेंसियां और ऐसे लोग जो आज घाटे को लेकर सरकारी राय दोहराते हैं, उन सभी का सामना एक अलग सच से होगा। ऐसे में राजकोषीय सुधार का दबाव उत्पन्न होगा।

केवल राजकोषीय जवाबदेही कानून से संबंधित नुस्खा काम नहीं आएगा क्योंकि आंकड़ों से छेड़छाड़ तो इस कानून के बनने के पहले से होता आया है। कानून को समाप्त करने के साथ-साथ अन्य बदलाव भी करने होंगे। नकदी लेखा की मौजूदा पुरानी व्यवस्था समाप्त करनी होगी। अधिकांश देश इसे त्याग चुके हैं। नकदी लेखा में सरकार के व्यय खाते का इस्तेमाल किया जाता है। उदाहरण के लिए बुनियादी कंपनियों द्वारा सड़क, पुल आदि के निर्माण का भुगतान करना। अधिकांश कंपनियां अपने बही खातों में कर्जदारों के बकाये का इस्तेमाल करती हैं। सरकार ऐसा नहीं करती और वह नकद लेखा के जरिये बच निकलती है। दूसरा, सरकारी क्षेत्र के लेखा का व्यापक अंकेक्षण होना चाहिए। इससे वह सारा व्यय सामने आ जाएगा जो अभी सरकार अपने संस्थानों मसलन खाद्य निगम आदि पर थोपती है। जिस खाद्य सब्सिडी बिल की भरपाई बजट से होनी थी उसे निगम ने अल्प बचत फंडों से उधारी लेकर निपटाया।

यदि इन बदलावों के माध्यम से विश्वसनीय बजटिंग नहीं होती है तो राजकोषीय घाटे को तीन फीसदी के स्तर पर रखने का कोई फायदा नहीं। टीसीए श्रीनिवास-राघवन ने इस समाचार पत्र में बार-बार कहा है कि यह आंकड़ा यूरोप का अनुकरण है जबकि भारत का आर्थिक संदर्भ यूरोप से एकदम अलग है। यह बात भरोसेमंद लगती है। तेज आर्थिक वृद्धि दर वाली भारतीय व्यवस्था उच्च घाटे वाले वृहद आर्थिक संकेतकों से निपट सकती है। जब तक घाटे की सच्चाई सबके सामने नहीं होगी तब तक वास्तविक आंकड़ों की दुनिया में ऐसे सवालों का जवाब मिलना आसान नहीं होगा।

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

बिनय सिन्हा

बुनियादी क्षेत्र में भी आए कर कटौती जैसी व्यवस्था

अगर कच्चे माल की लागत में समुचित कटौती की गई तो इससे उत्पादकता बढ़ाने में काफी सहायता मिल सकती है। विस्तार से जानकारी दे रहे हैं **श्याम पोनप्पा**

कर कटौती को लेकर संभवत: सरकार का सोचना यह है कि इससे राजस्व का जो भी नुकसान हो रहा है, दीर्घावधि में उससे ज्यादा हासिल होगा। हम भी इस बात को सहर्ष मान रहे हैं। इसके बावजूद इस दलील को व्यक्तिगत और उपभोक्ता करों तक नहीं बढ़ाया जा रहा है। यही नहीं इसे बुनियादी ढांचा क्षेत्र के कच्चे माल पर भी लागू नहीं किया गया जबकि इससे लागत कम करने में मदद मिलती। खासतौर पर संचार के लिए इस्तेमाल होने वाली रेडियो फ्रीक्वेंसी स्पेक्ट्रम, कोयला और बिजली के क्षेत्र में।

कॉर्पोरेट कर में कटौती का निर्णय बहुत अच्छा है। इसे बहुत पहले अपना लिया जाना चाहिए था। इस विषय में कुछ बातें हैं जिनके बारे में प्रभावशाली तबके और नीति निर्माता सोचेंगे और शीघ्र कदम उठाएंगे। मूल चिंता अंत:संबंधित प्रक्रियाओं को लेकर है। मसलन डिजाइन तैयार करने से लेकर क्रियान्वयन तक। इसके अतिरिक्त मांग के मोर्चे पर भी सुसंगतता कायम करनी होगी क्योंकि उसके बिना हमें अपेक्षित नतीजे नहीं मिल सकते। कई लोगों ने मांग बढ़ाने के लिए उपभोक्ताओं को प्रोत्साहन देने के बजाय कर कटौती अपनाने को लेकर आशंका प्रकट की है। कुछ विशेषज्ञों ने कहा कि ऐसे सुधार दुनिया भर में वृद्धि पैदा कर पाने में नाकाम रहे।

ये चिंताएं सही हो सकती हैं लेकिन ऐसी तुलना में अहम मानक यह है कि परिस्थितियां समतुल्य हैं या अलग। उदाहरण के लिए क्या बाजार बड़े हैं और उनमें विस्तार की संभावना है या नहीं? विविधता है या नहीं? कहीं बाजार संतृप्त तो नहीं हैं वगैरह, वगैरह। हालांकि शेयर बाजार ने इस पर बहुत उत्साहजनक प्रतिक्रिया दी लेकिन विशेषज्ञों का मत बंटा हुआ था क्योंकि मांग कमजोर थी और ये प्रोत्साहन आपूर्ति क्षेत्र को दिया गया था। एक और वजह यह है कि ज्यादा कर चुकाने वाली कंपनियों को सबसे अधिक लाभ होता है जबकि ज्यादातर कंपनियां प्रत्यक्ष तौर से लाभ नहीं कमा रही हैं। सर्वाधिक करदाताओं के लिए मुनाफा 11 फीसदी तक बढ़ेगा जबकि एफएमसीजी कंपनियां मसलन एचयूएल, आईटीसी तथा नेस्ले का मुनाफा 9 फीसदी तक बढ़ सकता है। सूचना प्रौद्योगिकी और औषधि कंपनियों के मुनाफे में 5 से 6 फीसदी बढ़ोतरी होने का अनुमान है। मौजूदा वाहन निर्माताओं को इस मंदी में प्रत्यक्ष लाभ मिलता नहीं दिख रहा है। हालांकि नई कंपनियों को 17 फीसदी कर चुकाना होगा जो सिंगापुर के बराबर है। बहरहाल कई वाहन कलपुर्जा निर्माता कंपनियां जो अब तक 29 से 35 फीसदी तक कर दे रही थीं, उनके मुनाफे में 4 से 10 फीसदी का इजाफा होगा। क्रिसिल ने 80 क्षेत्रों में करीब 1,000 कंपनियों का अध्ययन किया और पाया कि मुनाफे में कुल मिलाकर 37,000 करोड़ रुपये का इजाफा होगा। जबकि स्टेट बैंक ने करीब 3,500 कंपनियों के आधार पर (इस समाचार पत्र ने 490 कंपनियों के आधार) अनुमान लगाया है कि मुनाफे में 45,000 करोड़ रुपये का सुधार होगा। इंडिया रेटिंग्स ने इसके 60,000 करोड़ रुपये रहने की बात कही। इस मुनाफे के चलते कीमतों में कमी आ सकती है जिससे मांग बढ़ेगी।

बहरहाल देश की कर दरें अभी भी प्रतिस्पर्धी नहीं हैं। इसी समाचार पत्र में हाल ही में प्रकाशित एक आलेख में कहा गया कि प्रभावी कर दर की बात करें तो अभी भी लाभांश पर कर और शेयर पुनर्खरीद को जोड़ने पर यह मौजूदा विनिर्माताओं के लिए 46.2 फीसदी तथा नए विनिर्माताओं के लिए 41.1 फीसदी है। वियतनाम और थाईलैंड में यही दर 20 फीसदी और इंडोनेशिया तथा चीन में 25 फीसदी है। बुनियादी ढांचे में सुधार (मसलन पानी, बिजली, सीवरेज और कचरा प्रबंधन, संचार, परिवहन और लॉजिस्टिक आदि) और विधि व्यवस्था आदि के क्षेत्र में कुछ कदम उठाकर आपूर्ति क्षेत्र को प्रतिस्पर्धी बनाया जा सकता है। एक मांग स्थिर और सक्रिय जीएसटी व्यवस्था की है जहां दरों में कमी हो और जो आय कर कटौती से मेल खाए।

यदि समय, ऊर्जा और धन को सही तरीके से इन क्षेत्रों में निवेश किया जाए तो संभावनाओं का काफी विस्तार हो सकता है। इसके पश्चात कौशल और शिक्षा की मदद से व्यवस्थित विकास को आगे ले जाया जा सकता है।

कर छूट और बुनियादी ढांचा

व्यवस्थित विचार प्रक्रिया, विस्तृत प्रक्रिया प्रवाह और परियोजना प्रबंधन के क्षेत्र में व्याप्त कमियों के अलावा मुक्त बाजार के विचार तथा किसी भी प्रकार की औद्योगिक नीति के प्रयोग को लेकर भी भ्रम की स्थिति बनी हुई है। ऐसा इसलिए क्योंकि सामाजिक नियोजन वाली अतीत की गलतियों के उदाहरण हमारे सामने आ चुके हैं। यहां हमें पेशकदमी करनी होगी। या तो कॉर्पोरेट कर छूट की तरह की सुविधा प्राप्त होगी या फिर नाकामी हाथ लगेगी।

विकास संबंधी प्राथमिकता के लिए डिजिटलीकरण

ब्रॉडबैंड और डिजिटलीकरण के क्षेत्र में हमारे प्रयास निराश करने की हद तक निष्प्रभावी हैं। यह एक ऐसा उदाहरण है जहां हमें ब्रॉडबैंड के विकास में चीन के रुख को प्राथमिकता से अपनाना चाहिए। इसे एक मजबूत औद्योगिक नीति के माध्यम से गति देनी चाहिए। चीन में इसने महत्त्वपूर्ण आर्थिक भूमिका निभाई और चीन के लोगों को इसका आर्थिक लाभ भी मिला। भारत के लक्ष्य भी इससे अलग नहीं हैं लेकिन ब्रॉडबैंड को अपनाने की विस्तृत योजना और विनिर्माण को बढ़ावा नजर नहीं आता। बिना विस्तृत और कदम दर कदम प्रस्तावों के ई-सेवाओं से उम्मीद बांध ली गई है। चीन में ब्रॉडबैंड नेटवर्क को आखिरकार सार्वजनिक बुनियादी ढांचे के रूप में चिह्नित कर लिया गया और उसे सरकारी योजनाओं में शामिल किया गया। वहां स्पेक्ट्रम की नीलामी नहीं की गई। राज्य का स्वामित्व इसकी बुनियाद थी और ब्रॉडबैंड में निजी निवेश विभिन्न इमारतों और सार्वजनिक सुविधाओं (हवाई अड्डे, सबवे, राजमार्ग) आदि में सेवा की पहुंच बनाने में किया गया। इस दौरान नीतिगत रूप से यह सुनिश्चित किया गया कि सभी सेवा प्रदाताओं को समान पहुंच मिल सके।

दो अन्य घटनाएं इससे जुड़ी हुई हैं। एक है स्पेक्ट्रम और बुनियादी ढांचे की साझेदारी। जुलाई में ब्रिटेन ने कारोबारी जगत, संगठनों और मोबाइल कंपनियों को आवंटित तीन बैंड तक सार्वजनिक पहुंच सुनिश्चित कर दी। कोई भी न्यूनतम शुल्क देकर इनका इस्तेमाल कर सकता था। दूसरा है करीब 185,000 कर्मचारियों वाली बीएसएनएल और एमटीएनएल की खस्ता हालत। कर रियायत की तरह सरकार निजी क्षेत्र के साथ सलाह मशविरे और भागीदारी से कुछ ऐसे कदम उठा सकती है:

- केंद्रीकृत/क्लाउड रेडियो पहुंच नेटवर्क के साथ लाभकारी साझा बुनियादी नीति को अपनाना।
- भुगतान आधारित इस्तेमाल तय करके तमाम उपलब्ध स्पेक्ट्रम तक पहुंच उपलब्ध कराना।
- सार्वजनिक सुरक्षा और जनहित के लिए बीएसएनएल और एमटीएनएल को अंशधारक बनाना और निजी सेवा प्रदाताओं के साथ एक समूह का गठन।

यदि हम इस रुख को विस्तार दें और सामूहिक लाभ के लिए इसे तमाम संसाधनों से जोड़ें तो हमारे हित कम लागत में पूरे हो सकते हैं।

शिव सेना की बदलती राजनीति और चुनावी राजनीति में ठाकरे परिवार

सियासी हलचल

आदिति फडणीस

आदित्य ठाकरे भाजपा से अपनी पार्टी के लिए उपमुख्यमंत्री का पद मांग सकते हैं। उद्धव ठाकरे पार्टी प्रमुख बने रहेंगे। इस तरह शिव सेना सरकार में भी रहेगी और उससे बाहर भी। इससे बेहतर भला क्या हो सकता है?

शिव सेना की शुरुआत सन 1966 में हुई थी। परंतु तब से अब तक इसकी स्थापना करने वाले ठाकरे परिवार के किसी सदस्य ने चुनाव नहीं लड़ा है। बाल ठाकरे, उनके बेटे उद्धव ठाकरे और पोते आदित्य ठाकरे ने भी नहीं। परंतु अब बदलाव होता दिख रहा है। पार्टी आदित्य ठाकरे को मुंबई के वर्ली इलाके से चुनाव में उतारने जा रही है। यह इलाका मध्य वर्ग के दबदबे वाला है। यहां प्रत्याशी और निर्वाचन क्षेत्र दोनों महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि ये हमें बताते हैं कि शिव सेना का राजनीतिक भविष्य किस दिशा में जाने वाला है।

सबसे पहले बात करते हैं युवा आदित्य ठाकरे की। वह कवि और छायाकार हैं। उनकी पहली कविता पुस्तक 2007 में प्रकाशित हुई थी जिसका शीर्षक था, 'माई थॉट्स इन व्हाइट ऐंड ब्लैक'। अगले वर्ष केवल 17 वर्ष की उम्र में बतौर गीतकार उनका प्राइवेट एलबम बाजार में आया। 'उम्मीद' नामक इस म्यूजिक वीडियो में उनके लिखे आठ गाने शामिल थे। इस एलबम में न केवल सुरेश वाडेकर, शंकर महादेवन, कैलाश खेर और सुनिधि चौहान जैसे गायक-गायिकाओं ने अपनी आवाज दी, बल्कि उनके दादा बाल ठाकरे ने यह भी सुनिश्चित किया कि इस एलबम का लोकार्पण अमिताभ बच्चन करें। इस कार्यक्रम में 82 वर्षीय ठाकरे ने अपने पोते को सलाह दी थी कि बहुत तेज न चलें लेकिन ज्यादा धीमे चलना भी अच्छा नहीं होता। लता मंगेशकर ने ठाकरे के आवास मातोश्री जाकर युवा कवि को उसकी उपलब्धि के लिए बधाई दी थी।

जल्दी ही आदित्य पार्टी की युवा इकाई युवा सेना के अध्यक्ष बन गए। उनके जीमेल एड्रेस में भी टाइगर शब्द शामिल है। उन्हें पहली राजनीतिक सफलता तब मिली जब उनके नेतृत्व में युवा सेना ने मुंबई विश्वविद्यालय को मजबूर किया कि वह कनाडा वासी लेखक रोहिंटन मिस्त्री की किताब सच अ लॉन्ग जर्नी को अपने पाठ्यक्रम से हटाए। बिज़नेस स्टैंडर्ड को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने इस किताब को लेकर अपनी आपत्ति के बारे में बताया था। उन्होंने कहा कि यह किताब नस्लवादी और अनावश्यक विचारों से भरी है। उन्होंने कहा, 'मां-बाप के रूप में सोचिए, आप अपने बच्चों को ऐसी किताब कैसे पढ़ने दे सकते हैं? एक शिक्षक या छात्र के रूप में खुद को रखकर देखें तो भी आप कक्षा में ऐसी किताब कैसे पढ़ेंगे? आप किसी नीति की आलोचना कर सकते हैं वह सही है लेकिन गंदी भाषा और संदर्भ से काट कर पेश की गई चीजें पाठ्यक्रम में नहीं रह सकतीं। क्या हम अपने छात्र-छात्राओं को नस्ली साहित्य पढ़ाएंगे? या फिर कुछ ऐसा जिससे उन्हें रोजगार मिल सके?'

यह उनकी राजनीति का लब्बोलुआब है-लोगों के लिए रोजगार सुनिश्चित करना। यह सन 1966 की शुरुआत से कोई बहुत बड़ा बदलाव नहीं है। उस वक्त बाल ठाकरे का कहना था कि मुंबई महाराष्ट्र के लोगों के अलावा सभी को रोजगार दे रही है। ठाकरे ने उस दौर में 'मार्मिक' नामक एक साप्ताहिक शुरू किया था जो ब्रिटिश प्रकाशन पंच के तर्ज पर निकलता था। उसमें गुजराती सेठों, दक्षिण भारतीय क्लर्कों, उडुपी होटल के मालिकों और कांग्रेस नेताओं का मजाक उड़ाया जाता था। शिव सेना का उद्भव मार्मिक में प्रकाशित विचारों से ही हुआ था लेकिन जल्दी ही उसे अपनी वैचारिक स्थिति की समीक्षा करनी पड़ी। मुंबई के बाहर विस्तार करने और कोल्हापुर तथा नागपुर जैसे तेजी से उभरते कारोबारी केंद्रों में अपनी पहुंच बनाने के लिए उसे कहीं ज्यादा व्यापक चिंताओं का प्रदर्शन करना था। अब वह अधिक आक्रामक, हस्तक्षेपकारी हिंदुत्व के साथ आगे बढ़ रही थी, जिसमें पाकिस्तानी खिलाड़ियों को खेलने की इजाजत वाले क्रिकेट मैच का विरोध भी शामिल था।

अन्य नेताओं मसलन छगन भुजबल और मनोहर जोशी आदि ने चुनाव लड़े लेकिन ठाकरे परिवार ने नहीं। उद्धव ठाकरे को पहले पार्टी का कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया और पिता के निधन के बाद वह अध्यक्ष बन गए लेकिन उन्होंने चुनावी राजनीति से दूरी बरकरार रखी। इस बीच शिव सेना दो फाड़ हो गई। एक धड़ा उनके चचेरे भाई राज ठाकरे के साथ चला गया। उद्धव ने पार्टी की नीति तय करने पर ध्यान दिया। यह नीति थी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के वफादार विपक्ष की भूमिका। उन्होंने शिव सेना को केवल शहरी क्षेत्र (बृहन्मुंबई महानगर पालिका यानी बीएमसी में उसके रसूख के चलते) से निकाल कर ग्रामीण महाराष्ट्र में उसकी जरूरत को बढ़ावा दिया। सन 2009 के विधानसभा चुनाव में ग्रामीण महाराष्ट्र की 44 सीटों में से सेना 26 सीटें जीतने में कामयाब रही। उसे 15 शहरी और तीन अर्द्ध शहरी सीटों पर भी जीत मिली। सन 2014 में पार्टी की सीटों की तादाद बढ़कर 63 हो गई। इस बार उसे ग्रामीण क्षेत्रो में 34, शहरी क्षेत्र में 23 और अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में छह सीटों पर जीत मिली थी।

सवाल यह है कि आदित्य ठाकरे इनका प्रबंधन करने के बजाय चुनाव क्यों लड़ रहे हैं?

उन्होंने विधायक बनने की अपनी इच्छा कभी नहीं छिपाई। वहीं पार्टी को भी अब लग रहा है कि सरकार की आलोचना करने में समय गंवाने के बजाय उसका हिस्सा बनकर जरूरी असर डालना कहीं ज्यादा बेहतर है। प्राप्त जानकारी के मुताबिक आदित्य ठाकरे भाजपा से अपनी पार्टी के लिए उपमुख्यमंत्री का पद मांग सकते हैं। उद्धव ठाकरे पार्टी प्रमुख बने रहेंगे। इस तरह शिव सेना सरकार में भी रहेगी और उससे बाहर भी। इससे बेहतर भला क्या हो सकता है?

कानाफूसी

सभी विकल्प खुले

बीते एक सप्ताह के दौरान कांग्रेस के प्रवक्ताओं ने लगातार संवाददाता सम्मेलन आयोजित कर बिहार में बाढ़ की स्थिति को प्रमुखता से उठाया है। लेकिन इन सम्मेलनों में भी वे मुख्यमंत्री नीतीश कुमार पर किसी प्रकार का प्रहार करने से बचते रहे। यहां तक कि जब कांग्रेस के राज्य सभा सदस्य अभिषेक मनु सिंघवी और पार्टी में बिहार मामलों के प्रभारी शक्तिकांत गोहिल ने पटना में बाढ़ को लेकर राज्य सरकार की कमजोर तैयारी की आलोचना की तब भी उन्होंने यह नहीं कहा कि अगले वर्ष होने वाले विधानसभा उपचुनाव में यह मुद्दा होगा या नहीं। गोहिल ने कहा कि उनकी पार्टी के लिए यह मानवीय मुद्दा है, न कि राजनीतिक। उन्होंने यह भी कहा कि उपचुनाव के दौरान उठाने के लिए उनकी पार्टी के पास अनेक मुद्दे हैं। वहीं सिंघवी ने भी व्यक्तिगत हमले करने से परहेज किया। यहां तक कि जब उनसे पूछा गया कि क्या नीतीश कुमार की सुशासन बाबू की छवि को इससे धक्का पहुंचा है तो उन्होंने इसे भी टाल दिया। कांग्रेस, जदयू और राष्ट्रीय जनता दल के सूत्रों पर यकीन करें तो तीनों दलों के दोबारा मेल की गुंजाइश से इनकार नहीं किया जा सकता है।

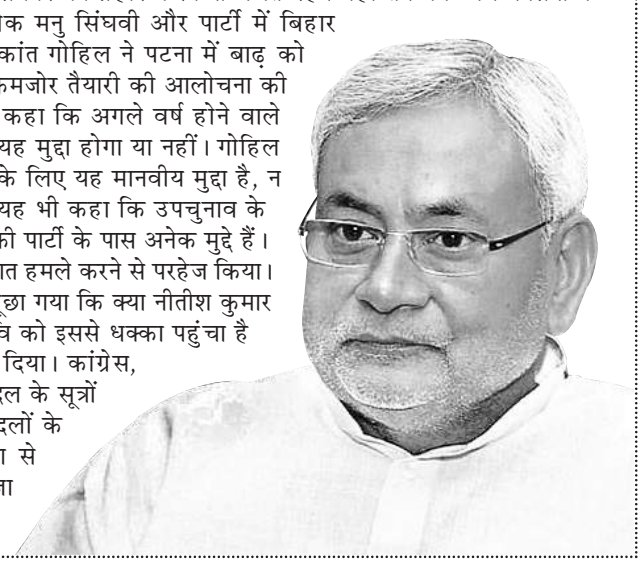

आपका पक्ष

देश में पर्यावरण का मुद्दा शीर्ष हो

जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौता वर्ष 2020 में कार्यान्वित होने के लिए तैयार है। स्वीडन की 16 वर्षीय किशोरी ग्रेटा का गुस्सा और चिंता जायज थी। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के एक सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन मुद्दे पर बयान देकर अपना गुस्सा जाहिर किया था। उन्होंने कहा कि आपने हमारे सपने, हमारा बचपन अपने खोखले शब्दों से छीन लिया है। मैं अभी भी भाग्यशाली हूं। हालांकि लोग झेल रहे हैं, वह मर रहे हैं, पूरा इको सिस्टम बरबाद हो रहा है। ग्रेटा के बयान की कई देशों के लोगों ने सराहना भी की। भारत में केंद्र सरकार और राज्य सरकार को भी यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि कार्बन को शुद्ध रूप से उपभोग के संदर्भ में नहीं देखा जाना चाहिए। बल्कि इसके

उत्पादन में भी हम सभी देशवासियों को विचार करना होगा। जहां ऊर्जा उत्सर्जन की दर अधिक नहीं है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे विशेष लाभ मिलना चाहिए। 'व्यक्तिगत उपयोग के लिए उपभोग' के बजाय 'उत्पादन के लिए उपभोग' समस्या बड़ा योगदान कर्ता है। इस संबंध में विचार विमर्श करने की जरूरत है। हमें अपनी विदेश नीति एजेंडे में जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के मुद्दे को शीर्ष स्तर पर रखने की जरूरत है। शक्ति और क्षमता में स्वचालन एवं कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग बढ़ता जा रहा है। इसलिए भारत को जलवायु परिवर्तन अनुकूल को एकल प्रौद्योगिकी रूपांतरण के रूप में नहीं देखना चाहिए।

स्वीकृति गुप्ता, फतेहपुर

पर्यावरण बचाने के लिए पूरे विश्व के लोगों को एकजुट होने की जरूरत है

मंदी में सकारात्मक रहने का प्रयास

इन दिनों समाचार माध्यमों और सोशल मीडिया पर कारोबारी जगत को लेकर लगातार नकारात्मक खबरें प्रकाशित और प्रसारित हो रही हैं। इससे एक प्रकार के भय का माहौल बन रहा है। लोगों को अपनी नौकरी या रोजगार की चिंता सताने लगी है। इसका असर उनकी उत्पादकता पर भी पड़ रहा है। व्यापारिक मंदी सार्वजनिक बहस का मुद्दा बन गई है। ऐसे में लोगों में निवेश को लेकर भी असमंजस पैदा हो रहा है कि क्या यह निवेश का सही समय है? निवेशक और व्यापारी दोनों इस मंदी में अपने व्यापार और निवेश को उबारने के तरीके तलाश कर रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार को लोगों को आश्वस्त करना चाहिए। उन्हें प्रेरित करना चाहिए ताकि वे तमाम आशंकाओं से मुक्त होकर काम कर सकें। आम जनता को भी चाहिए कि वह नकारात्मक खबरों के प्रति जागरूक रहे और आसपास के लोगों में भी जागरूकता फैलाये। बेहतर भविष्य के लिए यह आवश्यक है कि हम भयभीत होने के बजाय परिश्रम और अपना कर्म करें।

मुकेश करोडे, भोपाल

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।